|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 1: अर्जुनविषादयोग

3/4 (श्लोक 25-36), शनिवार, 26 नवंबर 2022

विवेचक: गीता विशारद डॉ. संजय जी मालपाणी

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/aWEejaWryq4

विषाद से भरे अर्जुन की मनःस्थिति का वर्णन

गुरु वंदना के साथ आज के सत्र का प्रारंभ हुआ। महाभारत में युद्ध के दौरान दोनों सेनाएं आमने-सामने खड़ी थीं। ग्यारह अक्षौहिणी सेना कौरवों के साथ और सात अक्षौहिणी सेना पाण्डवों के साथ थी। जब तक अर्जुन का रथ युद्धभूमि के बीच में नहीं आया था तब तक अर्जुन की इच्छा युद्ध करने की थी, किंतु जैसे ही भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन के रथ को दोनों सेनाओं के बीचों-बीच ला कर खड़ा कर दिया, अर्जुन की मनोदशा में परिवर्तन आने लगा। रथ को दोनों सेनाओं बीचों - बीच खड़ा करने के पीछे भगवान की यह योजना थी कि जो कुछ घटना है, युद्ध के आरंभ होने से पहले ही घटने दो, एक बार युद्ध आरंभ हुआ तो उसे रोकना असंभव होगा। इसलिए युद्ध के पहले ही अर्जुन को भगवान श्रीकृष्ण ने दोनों सेनाओं के बीच लाकर खड़ा कर दिया था। वहाँ पर अर्जुन को कौन-कौन दिखा इसका वर्णन आगे आता है।

1.25, 1.26

भीष्मद्रोणप्रमुखतः(स्), सर्वेषां(ञ्) च महीक्षिताम्।
उवाच पार्थ पश्यैतान्, समवेतान्कुरूनिति।।1.25।।
तत्रापश्यत्स्थितान्पार्थः(फ्), पितॄनथ पितामहान्।
आचार्यान्मातुलान्भ्रातॄन्, पुत्रान्पौत्रान्सखींस्तथा।।1.26।।

उसके बाद पृथानन्दन अर्जुन ने उन दोनों ही सेनाओं में स्थित पिताओं को, पितामहों को, आचार्यों को, मामाओं को, भाइयों को, पुत्रों को, पौत्रों को तथा मित्रों को, ससुरों को और सुहृदों को भी देखा।

विवेचन- यहां पर भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को पृथा नंदन कहते हैं क्योंकि पृथा यह कुंती का ही दूसरा नाम है। मां के साथ हमारा सबसे गहरा रिश्ता होता है। इसलिए भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को पृथा नंदन कहते हैं। जब अर्जुन ने अपने दादाजी, भाइयों, पुत्रों, मामाजी और आचार्यों को अर्थात कृपाचार्य और द्रोणाचार्य को अपने सामने देखा, शकुनि मामा को भी देखा, कौरवों को देखा, जो भाई ही थे, नाती पोते, ससुरों को देखा, कई सुहृद लोगों को देखा तब इन सब को देखकर अर्जुन के मन में हलचल पैदा हुई। अर्जुन की हालत देखकर भी भगवान चुप रहे, भगवान कुछ नहीं बोल रहे थे, क्योंकि भगवान अर्जुन को सुनना चाहते हैं। जब भी कोई व्यक्ति निराशा में होता है, तो उसे सुनना चाहिए। यदि हम सुनेंगे नहीं तो सामने वाला मन की

बात नहीं कहेगा। इसीलिए हमें जिह्वा एक और कान दो दिए गए हैं। **सुनना संवाद की सबसे बड़ी कला है**।

एक बार की घटना है- बच्चों को एक प्रश्नावली दी गई जिसमें उनसे पूछा गया कि बच्चों तुम्हें दिन भर में सबसे ज्यादा आनंद कब मिलता है? बच्चों को अनेक विकल्प दिए गए- जैसे मैथमेटिक्स करते हैं, खेलते हैं, नाटक करते हैं तब आंनद आता है। लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि बच्चों ने कहा हमें तब मजा आता है जब हम स्कूल बस में होते हैं क्योंकि तब हम किसी को सुनते नहीं है, अपनी बातें सुनाते हैं, तब हम सबसे ज्यादा खुश होते है । **अपने मन की बात कहने के लिए सुनने वाले कान होना सबसे बडा सुख है।**

1.27

श्वशुरान्सुहृदश्चैव, सेनयोरुभयोरपि।
तान्समीक्ष्य स कौन्तेयः(स्), सर्वान्बन्धूनवस्थितान्।।1.27।।

अपनी अपनी जगह पर स्थित उन सम्पूर्ण बान्धवों को देखकर वे कुन्तीनन्दन अर्जुन अत्यन्त कायरता से युक्त होकर विषाद करते हुए ऐसा बोले।

विवेचन- युद्ध के लिए अपनी जगह स्थित अपने बांधवों को देखकर अर्जुन कायर हो गए। अर्जुन विषाद से घिर गए। अर्जुन की यह कायरता परिस्थितिजन्य थी। अर्जुन ने ऐसे कई युद्ध किये थे परंतु आज का युद्ध निर्णायक युद्ध था। अर्जुन ने बृहन्नला के रूप में जब युद्ध किया था तब मोहिनी अस्त्र का प्रयोग करते हुए उन्होंने युद्ध में सबको सुला दिया और कहा था कि सब के वस्त्र उतार लो, तब भी सफेद दाढ़ी वाले दो व्यक्तियों के उत्तरीय निकालने से अर्जुन ने मना कर दिया था क्योंकि वे उनके गुरु थे। लेकिन आज अर्जुन का विश्वास ही डगमगाया हुआ था, अर्जुन विषाद से कहने लगे-

1.28, 1.29, 1.30

कृपया परयाविष्टो, विषीदन्निदमब्रवीत्। अर्जुन उवाच
दृष्ट्वेमं स्वजनं(ङ्) कृष्ण, युयुत्सुं(म्) समुपस्थितम्।।1.28।।
सीदन्ति मम गात्राणि, मुखं(ञ्) च परिशुष्यति।
वेपथुश्च शरीरे मे, रोमहर्षश्च जायते।।1.29।।
गाण्डीवं(म्) स्रंसते हस्तात्, त्वक्चैव परिदह्यते।
न च शक्नोम्यवस्थातुं(म्), भ्रमतीव च मे मनः।।1.30।।

अर्जुन बोले - हे कृष्ण! युद्ध की इच्छा वाले इस कुटुम्ब-समुदाय को अपने सामने उपस्थित देखकर मेरे अंग शिथिल हो रहे हैं और मुख सूख रहा है तथा मेरे शरीर में कँपकँपी (आ रही है) एवं रोंगटे खड़े हो रहे हैं। हाथ से गाण्डीव धनुष गिर रहा है और त्वचा भी जल रही है। मेरा मन भ्रमित-सा हो रहा है और (मैं) खड़े रहने में भी असमर्थ हो रहा हूँ।

विवेचन- हे कृष्ण, युद्ध की इच्छा होते हुए भी अपने कुटुम्ब के सामने मेरे अंग शिथिल हो रहे हैं, मेरा मुँह सूख रहा है, शरीर में कंपन हो रहा है, गाण्डीव धनुष नीचे गिर रहा है और मेरी सम्पूर्ण त्वचा जल रही है, इसी के साथ मेरे शरीर में भी दाह हो रहा है। मेरा मन भ्रमित सा हो रहा है और मैं खड़ा रहने में भी असमर्थ हूँ। यह सारी घटना एक क्षण में घट गई। अर्जुन extreme depression में चले गए। वे अत्यंत विषाद की स्थिति में पहुँच गए।

इस तरह की मानसिक अवस्था में किसी भी व्यक्ति को psychologist और फिर psychiatrist के पास जाना चाहिए। साइकोलॉजिस्ट समुपदेशन करते हैं। समुपदेशक व्यक्ति की पूरी बातें ध्यानपूर्वक सुनते हैं। इसलिए साइकोलॉजिस्ट के sessions लंबे चलते हैं। वे एक मित्र के समान सवाल करते हैं और उत्तर में विषाद का कारण जान लेते हैं। कोरोना काल में लोगों के झगड़े ज्यादा होने लगे क्योंकि एकाकीपन बहुत बुरा होता है ।

अर्जुन और कृष्ण सखा हैं, मित्र हैं। एक दूसरे से कुछ नहीं छिपाते, इसलिए अर्जुन अपनी मनोदशा के बारे मे उन्हे विस्तार से बताते हैं। यह मैत्री की भावना बड़ी महत्वपूर्ण है।

दोस्तों के लिए समय निकालना बहुत जरूरी होता है । एकाकीपन से घिरे व्यक्ति नकारात्मकता के शिकार हो सकते है, इसलिए मित्र का होना जरूरी है, उनके लिए समय निकालना चाहिए। परिवार में हम में से एक व्यक्ति डस्टबिन बन जाए तो वह सबका प्रिय होता है। डस्टबिन में सब कुछ डाला जा सकता है और मन को खाली किया जा सकता है। मन को स्वस्थ रखने के लिए यह बहुत आवश्यक है। अधिकतर संयुक्त परिवारों मे यह कार्य दादी ही करती है। परिवार में संवाद होना चाहिए। आज जेनरेशन गैप नहीं परंतु कम्यूनिकेशन गैप है। परस्पर के बीच संवाद की आवश्यकता है। टकराव अथवा मतभेद के पश्चात बड़ों को प्रणाम करने जैसी परंपरा को हम भूलते जा रहे हैं। बड़ों को कोई प्रणाम करें तो उन्हें आशीर्वाद देना पड़ता है। प्रणाम करने की इस परंपरानुसार जब युधिष्ठिर पितामह भीष्म की ओर नंगे पाँव जाकर उन्हें नमस्कार करते हैं तब पितामह को उन्हें विजयी भव का आशीर्वाद देना ही पड़ता है। शत्रु के राजा को विजयी भव यह कहना पड़ता है। पैर छूने से आशीर्वाद देना ही पड़ता है। इस तरह पुराने मतभेद समाप्त हो जाते है और मनोमिलन हो जाता है।

यहाँ अर्जुन कह रहे हैं और भगवान सुन रहे हैं। भगवद्गीता समुपदेशन की सर्वश्रेष्ठ पुस्तक है, इसमे भिन्न-भिन्न प्रकृति के लिए अलग-अलग मार्ग बताये गये हैं, भक्तियोग ज्ञानयोग इत्यादि। दुविधा की स्थिति में विचारों की गति बढ़ जाती है, भारतीय मनोविज्ञान विचारों की गति को कम करने का मार्ग बताता है, यह मार्ग योग का मार्ग है। योग से श्वसन की गति को कम कर विचारों की गति को कम किया जा सकता है। देखा जाए तो हमारे मन में एक समय में एक ही विचार आता है, उसपर नियंत्रण कर विचार-शून्यता और विकार - शून्यता प्राप्त हो सकती है। भारतीय मनोविज्ञान रोग होने से पहले ही सक्रिय होता है जब कि पाश्चात्य मनोविज्ञान रोग होने के बाद काम करता है।

1.31

निमित्तानि च पश्यामि, विपरीतानि केशव।
न च श्रेयोऽनुपश्यामि, हत्वा स्वजनमाहवे।।1.31।।

।। हे केशव! मैं लक्षणों (शकुनों) को भी विपरीत देख रहा हूँ (और) युद्ध में स्वजनों को मारकर श्रेय (लाभ) भी नहीं देख रहा हूँ।

विवेचन- महाभारत के युद्ध के दौरान बहुत अपशकुन हो रहे थे जैसे कुत्ते रो रहे थे, शाम के समय पंछी पेड़ से उड़ रहे थे, बादलों से रक्त की वर्षा हो रही थी। इस प्रकार की घटनाएं हो रही थी, जिन्हें अपशकुन समझा जाता है। मनुष्य की मनस्थिति खराब होने से परिस्थिति खराब हो जाती है। इस प्रकार की स्थिति में मन के विकारों को कम करने की दवा दी जाती है। भारतीय शास्त्र में प्राणायाम इसका उपाय है। ध्यान को अधिक महत्त्व दिया गया है, जिसकी वजह से विकारशून्यता और विचारशून्यता आ जाती है और मन पर, विचार पर काबू पाना, नियंत्रण लाना संभव हो जाता है। विषादग्रस्त मन:स्थिति के कारण अर्जुन को युद्ध में स्वजनों को मार कर कोई लाभ नहीं दिख रहा था। अर्जुन आगे कह रहे हैं-

1.32

न काङ्क्षे विजयं(ङ्) कृष्ण, न च राज्यं(म्) सुखानि च।
किं(न्) नो राज्येन गोविन्द, किं(म्) भोगैर्जीवितेन वा।।1.32।।

हे कृष्ण! (मैं) न तो विजय चाहता हूँ, न राज्य (चाहता हूँ) और न सुखों को (ही चाहता हूँ)। हे गोविन्द! हम लोगों को राज्य से क्या लाभ? भोगों से (क्या लाभ)? अथवा जीने से (भी) क्या लाभ?

विवेचन- अर्जुन कहते हैं - हे कृष्ण, मै ऐसा रक्तरंजित सिहासन नहीं चाहता। ऐसे रक्तरंजित सिहासन की तो मैं सीढ़ियाँ भी नहीं चढ़ना चाहता। मैं ऐसा राज्य नहीं चाहता हूँ और ऐसे सुखों को भी नहीं चाहता हूँ। मुझे ऐसे भोग नहीं चाहिए। मुझे ऐसे जीने से भी कोई लाभ होता हुआ नहीं दिखाई दे रहा है।

1.33

येषामर्थे काङ्क्षितं(न्) नो, राज्यं(म्) भोगाः(स्) सुखानि च।
त इमेऽवस्थिता युद्धे, प्राणांस्त्यक्त्वा धनानि च।।1.33।।

जिनके लिये हमारी राज्य, भोग और सुख की इच्छा है, वे (ही) ये सब (अपने) प्राणों की और धन की आशा का त्याग करके युद्ध में खड़े हैं।

विवेचन- अर्जुन कहने लगे- जिनके लिए हम युद्ध करते हैं, जिनके लिए राज्य पाना चाहते हैं, सुख की इच्छा जिनके लिए करते हैं, वे सभी अपने लोग यहां खड़े हैं। उनको मुझे नही मारना है। मुझे युद्ध नहीं करना है।

1.34, 1.35

आचार्याः(फ्) पितरः(फ्) पुत्रास्, तथैव च पितामहाः।
मातुलाः(श्) श्वशुराः(फ्) पौत्राः(श्), श्यालाः(स्) सम्बन्धिनस्तथा।।1.34।।
एतान्न हन्तुमिच्छामि, घ्नतोऽपि मधुसूदन।
अपि त्रैलोक्यराज्यस्य, हेतोः(ख्) किं(न्) नु महीकृते।।1.35।।

आचार्य, पिता, पुत्र और उसी प्रकार पितामह, मामा, ससुर, पौत्र, साले तथा (अन्य जितने भी) सम्बन्धी हैं, (मुझ पर) प्रहार करने पर भी (मैं) इनको मारना नहीं चाहता, (और) हे मधुसूदन! (मुझे) त्रिलोकी का राज्य मिलता हो, तो भी (मैं इनको मारना नहीं चाहता), फिर पृथ्वी के लिये तो (मैं इनको मारूँ ही) क्या? (1.34-1.35)

विवेचन- अर्जुन कह रहे हैं- हे मधुसूदन! मेरे सामने खड़े हैं वह मेरे आचार्य हैं, वह मेरे पितामह हैं, जिन्होंने मुझे अपनी गोदी में खिलाया। मेरे पिता की मृत्यु के बाद इन्होने ही पिता की तरह मुझे गोदी मे खिलाया है। ये मेरे मामा हैं, मेरे ससुर हैं, पोते हैं, साले भी हैं और मेरे सभी सगे संबंधी हैं। जिनपर प्रहार कर मैं उन्हे कभी मारना नहीं चाहूंगा। हे मधुसूदन, अगर त्रिलोक का राज्य भी मुझे मिल जाए तो भी मैं इन्हें मारना नहीं चाहता, फिर इस छोटी सी हस्तिनापुर की भूमि के लिए इन्हें क्यो मारूँ? इन्होंने मुझ पर प्रहार किया तब भी मैं इन्हे नहीं मारूंगा।

1.36

निहत्य धार्तराष्ट्रान्नः(ख्), का प्रीतिः(स्) स्याज्जनार्दन।
पापमेवाश्रयेदस्मान्, हत्वैतानाततायिनः।।1.36।।

हे जनार्दन! (इन) धृतराष्ट्र-सम्बन्धियों को मारकर हम लोगों को क्या प्रसन्नता होगी? इन आततायियों को मारने से तो हमें पाप ही लगेगा।

विवेचन-अर्जुन कह रहे हैं - हे जनार्दन। इन संबंधियों को मारकर हम लोगों को क्या प्रसन्नता होगी ? इन आततायियों को मारने से हमें पाप ही लगेगा। अर्जुन ने यहां आततायी शब्द का प्रयोग किया है। आततायी का मतलब होता है आतंकी। मनुस्मृति कहती है - छह प्रकार के आततायी होते है उन्हें मारना हीं चाहिए। उनको मारने से कोई पाप नहीं लगता है।

छह प्रकार के आततायी हैं-

1)अग्नि आग लगाने वाले निरपराध लोगों को मारने वाले
2)विष देने वाले
3) हाथ में शस्त्र लेकर मारने वाले
4)धन का अपहरण करने वाले

5)क्षेत्र या भूमि पर आधिपत्य करने वाले
6) स्त्री का अपहरण करने वाले

यह सभी आततायी होते हैं, उन्हें मारना ही चाहिए। आतंकी को मारने से कोई पाप नहीं लगता। फिर भी अर्जुन सोच रहे हैं कि मैं ऐसा करूंगा तो मुझे पाप लगेगा और यह भाव अर्जुन के मन में बढ़ता ही जा रहा है। अर्जुन के अंतर्मन में धर्म और अधर्म के बीच नहीं, परंतु धर्म और धर्म के बीच युद्ध चल रहा है ।

एक कहानी है - एक बार एक बालक सत्य धर्म और पुत्र धर्म की दुविधा में फँस गया। एक बार उसके यहां कोई पेपर वाला बिल लेने आया तो उसके पिताजी ने कहा कि उन्हें कहना मैं नहीं हूँ। बच्चे ने पिता की आज्ञा का पालन किया, उसने सोचा किसी कारणवश पिताजी पेपर वाले को उस समय पैसे नहीं देना चाहते हों, तो यह बात है दो धर्मों के बीच अधिक बड़े धर्म का मार्ग चुनने की। **जब जब धर्म और धर्म के बीच ही टकराव होता है, तब तब कौन सा धर्म बड़ा और कौन सा धर्म छोटा होता है, यह जानना जरूरी है। भगवद्गीता यही समझाती है। अधिक व्यापक धर्म का पालन करना चाहिए।**

यदि टकराहट एक व्यक्ति के हित और परिवार के हित के बीच है व्यक्ति के हित के स्थान पर परिवार के हित को प्रधानता देनी चाहिए। अगर परिवार के हित और गांव का हित के बीच टकराहट है तो गांव के हित को प्राधान्य दे देना चाहिए, इसी प्रकार अगर गांव का हित और देश का हित सामने है तो देश हित को प्रधानता देना चाहिए।

इस सुंदर सरल विवेचन के बाद प्रश्न उत्तर सत्र का आरंभ हुआ।

प्रश्न उत्तर
प्रश्नकर्ता - सदानंद जी -

प्रश्न - अर्जुन को पता चल गया था श्रीकृष्ण तो भगवान हैं फिर उनका उसके प्रति व्यवहार कैसा रहा? भगवान जैसा या मित्र जैसा ?

उत्तर- हम एक श्लोक में पढ़ते हैं - त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बंधुश्च सखा त्वमेव, त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देव देव। भगवान से कहा गया है कि तुम्ही माता हो तुम्हीं पिता हो। इस प्रकार से सभी भूमिकाओं में अर्जुन ने भगवान को देखा। अर्जुन तो निमित्त मात्र है, अर्जुन जैसा हम सबको बनना होगा। समर्पण करना होगा।

प्रश्नकर्ता - पूनम जी

प्रश्न- सभी योद्धाओंके धनुष्य का नाम गाण्डीव है क्या ?

उत्तर - नही, केवल अर्जुन के धनुष का नाम गाण्डीव है। अलग-अलग योद्धाओं के शस्त्रों का नाम अलग - अलग होता है। अलग - अलग योद्धा के बजाने वाले शंखों का नाम भी अलग-अलग होता है।

प्रश्नकर्ता - मंजू जी

प्रश्न- पत्रं पुष्पं फलं तोयं का अर्थ समझाइए

उत्तर - भगवान कहते हैं समर्पण के भाव से एक पत्ता भी मुझे चढ़ाओं तो भी चलेगा या फूल चढ़ाओं। यह भी नहीं है, तो पानी चढ़ाओं बस। आप क्या चढ़ा रहे यह महत्वपूर्ण नहीं है समर्पण की भावना महत्वपूर्ण है।

प्रश्नकर्ता - मंजू जी

प्रश्न- विकारों की ओर विचारों की शून्यता क्या होती है ?

उत्तर- लोभ, मोह, मद, मत्सर ये विकार हैं। जैसे जलेबी देखकर हमारे मन में खाने की इच्छा होती है, पहले आँखें जलेबी को देखती हैं, फिर विचार आता है कि इसे खाया जाना चाहिए, इसके पश्चात विचार होने के पश्चात इच्छा उत्पन्न होती है । विचार से ही विकार उत्पन्न होते हैं और फिर कामना उत्पन्न होती है। जैसे - जैसे विचार रुक जायेंगे वैसे - वैसे विकार रुक जायेंगे।

इसके साथ ही आज के विवेचन सत्र का समापन हुआ।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
आइये हम सब गीता परिवार के इस ध्येय से जुड़ जायें, और अपने इष्ट-मित्र -परिचितों को गीता कक्षा का उपहार दें।

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||
||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||